International Journal of Social Science and Humanities
www.humanitiesjournals.com
Online ISSN: 2664-8628 Print ISSN: 2664-861X
Received: 28-06-2025, Accepted: 27-07-2025, Published: 14-08-2025
Volume 7, Issue 4, 2025, Page No. 51-53

महात्मा गांधी की नैतिक राजनीतिः अहिंसा और सत्याग्रह के माध्यम से समाज की पुनर्रचना

डॉ. सोनिका भारती
शिक्षिका, सामाजिक विज्ञान विभाग, उत्क्रमित उच्च माध्यमिक विद्यालय बिशनपुर, नाथनगर, भागलपुर, बिहार, भारत

सारांश
महात्मा गांधी की राजनीतिक दृष्टि सत्ता–राजनीति के पारंपरिक विमर्श से मौलिक रूप से भिन्न थी। वे राजनीति को केवल शासन या अधिकारों की लड़ाई के रूप में नहीं, बल्कि नैतिकता, आत्म–संयम और सामाजिक उत्थान की प्रक्रिया के रूप में देखते थे। उनके लिए अहिंसा और सत्याग्रह न तो मात्र राजनीतिक रणनीतियाँ थीं और न ही संघर्ष के औजार; वे व्यक्ति और समाज के नैतिक रूपांतरण की साधनाएँ थीं। यह शोधपत्र गांधी की नैतिक राजनीति की मूल अवधारणाओं—जैसे सत्य, अहिंसा, आत्मबल, ग्रामस्वराज और आत्मशासन—का विश्लेषण करता है, और प्रतिपादित करता है कि गांधी का राजनीतिक चिंतन एक समग्र नैतिक जीवन–दर्शन में रचाबसा था।
गांधी की अहिंसा केवल हिंसा के विरोध की प्रतिक्रिया नहीं थी, बल्कि करुणा, सहअस्तित्व और सामाजिक न्याय की सक्रिय प्रेरणा थी। सत्याग्रह को उन्होंने अन्याय के विरुद्ध आत्मबल आधारित नैतिक प्रतिरोध की विधि के रूप में परिभाषित किया, जिसका उद्देश्य विरोधी का नैतिक रूपांतरण था, न कि उसका दमन। ग्रामस्वराज की उनकी अवधारणा विकेन्द्रीकृत, आत्मनिर्भर और नैतिक समाज की कल्पना प्रस्तुत करती है, जो आज भी लोकतांत्रिक और विकासात्मक संकटों का एक वैकल्पिक समाधान सुझाती है।
समकालीन समय में जब राजनीति अक्सर जनसेवा से दूर होकर स्वार्थ और ध्रुवीकरण की ओर झुकी प्रतीत होती है, गांधी का चिंतन एक नैतिक पुनर्विचार की प्रेरणा प्रदान करता है। यह शोध इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि गांधी की नैतिक राजनीति न केवल ऐतिहासिक स्मृति है, बल्कि वर्तमान की आवश्यकता और भविष्य की दिशा भी है।

मूल शब्दः लोकतांत्रिक, सत्ता–राजनीति, ऐतिहासिक स्मृति, सत्याग्रह

महात्मा गांधी की राजनीतिक अवधारणा पारंपरिक सत्ता की राजनीति से मौलिक रूप से भिन्न थी। वे राजनीति को केवल शासन–प्रशासन का औजार नहीं, बल्कि नैतिक और आत्मिक सुधार का साधन मानते थे। गांधी का विश्वास था कि समाज की वास्तविक मुक्ति हिंसा या शक्ति के प्रदर्शन से नहीं, बल्कि आत्मबल, नैतिक अनुशासन और सत्य की खोज से संभव है (Gandhi, 1927: 234)। उनके विचारों में राजनीति और नैतिकता एक–दूसरे के पूरक थे; जहां नैतिकता का अभाव हो, वहां राजनीति केवल सत्ता की लिप्सा बन जाती है (Parel, 2006: 17)।
गांधी की राजनीति का केंद्रीय तत्व अहिंसा (nonviolence) और सत्याग्रह (truth & force) था। यह दोनों केवल रणनीति या आंदोलन के साधन नहीं थे, बल्कि उनके जीवन–दर्शन और सामाजिक पुनर्रचना की आधारशिला थे। यह शोधपत्र गांधी की नैतिक राजनीति की मूलभूत अवधारणाओं का विश्लेषण करता है और यह प्रतिपादित करता है कि कैसे उन्होंने अहिंसा और सत्याग्रह को न केवल राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के औजार के रूप में, बल्कि भारतीय समाज के नैतिक पुनर्निर्माण की विधियों के रूप में प्रस्तुत किया।

1. गांधी की राजनीतिः नैतिकता का सार्वजनिक रूप

महात्मा गांधी की दृष्टि में राजनीति केवल सत्ता के संघर्ष का नाम नहीं थी, बल्कि यह नैतिकता का सार्वजनिक प्रयोग था। उनके अनुसार, "राजनीति और नैतिकता अलग नहीं हो सकते। यदि वे अलग हैं, तो राजनीति अधार्मिक और आत्मविहीन हो जाती है" (Gandhi, 1927: 232)। यह कथन गांधी की संपूर्ण राजनीतिक दृष्टि का आधार है, जिसमें सत्ता नहीं, बल्कि सत्य और आत्मबल की प्रमुखता है।
गांधी की राजनीतिक चेतना की जड़ें प्राचीन भारतीय परंपरा में थींकृवैदिक सत्य, जैन अहिंसा, और भगवद्गीता के निष्काम कर्मयोग ने उनके नैतिक चिन्तन को दिशा दी। उन्होंने राजनीति को एक नैतिक साधना के रूप में देखा, न कि एक मात्र रणनीतिक औजार के रूप में। जैसा कि भिक्खू पारेख लिखते हैं, "गांधी के लिए राजनीति व्यक्ति और समाज की आत्मशुद्धि की प्रक्रिया थी, जो केवल सामाजिक व्यवस्था नहीं, बल्कि नैतिक चेतना के जागरण का कार्य करती थी" (Parekh, 1997: 12)।
गांधी का स्वराज (Swaraj) केवल औपनिवेशिक सत्ता से मुक्ति नहीं, बल्कि आत्मसंयम, कर्तव्यबोध और नैतिक जीवन का प्रतिरूप था। वे मानते थे कि सच्चे स्वराज का अर्थ है– ऐसा समाज जहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपने ऊपर शासन करने में समर्थ हो, और यह आत्म–शासन नैतिक अनुशासन के बिना संभव नहीं (Parel, 2006: 21)। इस प्रकार गांधी की राजनीति में नैतिकता कोई बाहरी तत्व नहीं थी, बल्कि उसकी आत्मा थी।

2. अहिंसाः केवल साधन नहीं, एक सामाजिक दर्शन

महात्मा गांधी के लिए अहिंसा केवल एक रणनीतिक साधन नहीं थी, बल्कि जीवन और समाज के पुनर्रचना का एक नैतिक एवं दार्शनिक आधार थी। यह मात्र हिंसा के अभाव की स्थिति नहीं, बल्कि करुणा, सह–अस्तित्व और सृजनशीलता की सक्रिय अभिव्यक्ति थी। गांधी स्पष्ट करते हैं कि, "अहिंसा परम धर्म है, यह कायरता नहीं, वीरता की पराकाष्ठा है" (Gandhi, 1927: 298)। उनके लिए यह सिद्धांत नैतिक बल (moral force) पर आधारित एक सक्रिय सामाजिक साधना थी।
गांधी की अहिंसा की अवधारणा केवल शारीरिक हिंसा तक सीमित नहीं थी; यह मानसिक, भाषिक, आर्थिक और संस्थागत हिंसा के हर रूप के प्रति असहमति का नैतिक स्वरूप थी। उन्होंने अस्पृश्यता, जातिगत भेदभाव, स्त्री–दमन, और उपभोक्तावाद को भी हिंसा के ही परिष्कृत रूप माना (Parel, 2006: 54)। इस व्यापक दृष्टिकोण में अहिंसा सामाजिक न्याय की एक आधारशिला के रूप में उभरती है।
गांधी के लिए अहिंसा का उद्देश्य विरोधी को पराजित करना नहीं था, बल्कि उसकी अंतरात्मा को स्पर्श कर उसे नैतिक रूप से

परिवर्तित करना था। इस प्रक्रिया को वे 'हृदय परिवर्तन' (conversion of heart) कहते हैं। दक्षिण अफ्रीका में 1906 के सत्याग्रह आंदोलन से लेकर भारत में खेड़ा, चंपारण और दांडी यात्रा तक, उन्होंने अहिंसा को एक जीवंत सामाजिक दर्शन के रूप में प्रतिपादित किया। जैसा कि अंथोनी परेल लिखते हैं, "गांधी की अहिंसा केवल राजनीतिक रणनीति नहीं, बल्कि वह मनुष्य और समाज की आत्मिक मुक्ति की प्रक्रिया है" (Parel, 2006: 56)।

गांधी की दृष्टि में अहिंसा का उद्देश्य विरोधी को पराजित करना नहीं, बल्कि उसे नैतिक स्तर पर परिवर्तित करना था। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में इसका पहला प्रयोग किया और फिर भारत में व्यापक स्तर पर इसे अपनाया।

3. सत्याग्रहः नैतिक शक्ति का प्रयोग

गांधी के राजनीतिक चिंतन में सत्याग्रह केवल एक विरोध की विधि नहीं, बल्कि अन्याय के विरुद्ध नैतिक प्रतिरोध की एक क्रांतिकारी अवधारणा थी। 'सत्याग्रह' का शाब्दिक अर्थ है—सत्य के प्रति आग्रह, किंतु गांधी के लिए यह आग्रह केवल वैचारिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक, नैतिक और आत्मिक भी था। यह आत्मबल (soul & force) पर आधारित था, न कि भौतिक या हिंसक बल पर (Brown, 1991: 102)। उनके अनुसार, जब व्यक्ति अथवा समाज अन्याय के विरुद्ध खड़ा होता है, तो उसका सबसे सशक्त साधन उसकी आत्मिक निष्ठा और नैतिक अनुशासन होता है।

गांधी ने सत्याग्रह को सैद्धांतिक रूप से तीन प्रमुख स्तंभों पर आधारित कियाकृसत्य (truth), अहिंसा (nonviolence), और आत्मसंयम (self & restraint)। यह संघर्ष की वह प्रक्रिया थी, जिसमें प्रतिद्वंद्वी को शत्रु नहीं बल्कि नैतिक स्तर पर एक भ्रांत आत्मा के रूप में देखा जाता था, जिसे सुधारने का प्रयास किया जाना चाहिए। इस दृष्टिकोण में 'विजय' का उद्देश्य विरोधी का दमन नहीं, बल्कि उसका नैतिक रूपांतरण था।

चंपारण सत्याग्रह (1917), खेड़ा आंदोलन (1918), अहमदाबाद मिल मज़दूर संघर्ष (1918), तथा दांडी यात्रा (1930) जैसे आंदोलनों में गांधी ने इस नैतिक शक्ति का व्यावहारिक प्रयोग किया। इन संघर्षों में उन्होंने जनता को केवल राजनीतिक अधिकारों के लिए नहीं, बल्कि आत्म–संयम, अनुशासन और नीतिगत प्रतिरोध के लिए भी संगठित किया। सत्याग्रह ने भारतीय जनता को स्वतंत्रता की परिभाषा को केवल राजनीतिक सत्ता से जोड़ने के बजाय, उसे नैतिक स्वराज के रूप में समझने की दृष्टि दी।

जैसा कि पॉल ब्राउन लिखते हैं, "सत्याग्रह गांधी की राजनीति में आत्मा की पुकार थी, जो न केवल उपनिवेशवाद के विरुद्ध थी, बल्कि हर प्रकार के नैतिक पतन के विरुद्ध संघर्ष थी" (Brown, 1991: 104)। अतः, सत्याग्रह गांधी के लिए संघर्ष का एक माध्यम ही नहीं, बल्कि नैतिक पुनर्जागरण की विधि थी।

4. समाज की पुनर्रचनाः ग्रामस्वराज और नैतिक स्वराज

महात्मा गांधी की दृष्टि में राजनैतिक स्वतंत्रता का कोई मूल्य नहीं यदि वह सामाजिक और नैतिक पुनर्रचना से वंचित हो। उनके अनुसार, स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ केवल औपनिवेशिक सत्ता से मुक्ति नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति की आत्मिक मुक्ति और नैतिक सशक्तिकरण है। यही कारण था कि गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन को सामाजिक सुधार के कार्यक्रमोंकृजैसे अस्पृश्यता–निवारण, खादी आंदोलन, और ग्राम–स्वराज—से संयुक्त किया।

गांधी का ग्रामस्वराज किसी प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण का मॉडल नहीं था, बल्कि एक वैकल्पिक सामाजिक व्यवस्था की नैतिक कल्पना थी। वे एक ऐसे भारत की परिकल्पना करते थे, जहाँ गांव आत्मनिर्भर इकाइयाँ होंकृसामाजिक समानता, आर्थिक न्याय, और सांस्कृतिक स्वायत्तता के साथ (Chatterjee, 1986: 121)। गांधी मानते थे कि "भारत का हृदय गांवों में बसता है" और यदि भारत को पुनर्जीवित करना है तो यह पुनरुद्धार श्नीचे से ऊपरश्कृगांवों से—होना चाहिए।

गांधी की सामाजिक दृष्टि में खादी केवल वस्त्र नहीं, बल्कि स्वदेशी, श्रम और स्वाभिमान का प्रतीक थी। इसी प्रकार हरिजन–सेवा केवल दान नहीं, बल्कि सामाजिक पाप के प्रायश्चित का मार्ग था। उनके लिए स्वच्छता, श्रम, और संयम—सभी राष्ट्रनिर्माण के नैतिक स्तंभ थे। गांधी स्पष्ट कहते हैं:

"अगर मैं समाज का उद्धार चाहता हूँ, तो पहले मुझे स्वयं को बदलना होगा" (Gandhi, 1927: 315)।

इस कथन से स्पष्ट होता है कि गांधी का समाज–दर्शन व्यक्तिगत आचरण के नैतिक अनुशासन से शुरू होकर समष्टिगत उत्थान की ओर अग्रसर होता है। उनके लिए नैतिक स्वराज का अर्थ था—आत्मशुद्धि, सेवा, और सतत नैतिक प्रयत्न के माध्यम से समाज को पुनः रचना।

गांधी का समाज कोई अमूर्त यूटोपिया नहीं था, बल्कि उनकी राजनीतिक रणनीति का नैतिक प्रक्षेप थाकृएक ऐसा राष्ट्र जहाँ नागरिक केवल कानून से नहीं, बल्कि नैतिक बोध से संचालित हों। इस प्रकार गांधी का ग्रामस्वराज दरअसल भारत के नैतिक पुनरुत्थान की आधारशिला था।

5. नैतिक राजनीति का समकालीन महत्व

इक्कीसवीं सदी के प्रारंभिक दशक हिंसा, असहिष्णुता, सांप्रदायिकता और उपभोक्तावाद के तीव्र प्रसार से चिह्नित हैं। ऐसे समय में महात्मा गांधी की नैतिक राजनीति केवल ऐतिहासिक अनुकरण नहीं, बल्कि समकालीन चुनौतियों का एक नैतिक प्रतिप्रस्ताव है। गांधी का यह विश्वास कि "राजनीति, यदि नैतिक नहीं हो, तो वह आत्महीन बन जाती है" (Gandhi, 1927: 232), आज के राजनीतिक विमर्श में नितांत प्रासंगिक हो उठा है, जहाँ सत्ता अक्सर लोकसेवा के बजाय स्वार्थसिद्धि का उपकरण बन चुकी है।

गांधी का सत्याग्रह का सिद्धांत आज भी वैश्विक नागरिक आंदोलनों—जैसे जलवायु न्याय (climate justice), नस्लीय समानता, और सामाजिक असमानताओं के विरोधकृमें सक्रिय रूप से प्रतिध्वनित होता है। दक्षिण अफ्रीका में अपार्थेड–विरोधी संघर्ष हो या अमेरिका में सिविल राइट्स मूवमेंटकृगांधी की नैतिक रणनीतियाँ और विचारधारा प्रेरणा का स्रोत बनी रहीं। हाल के वर्षों में भारत में किसानों के आंदोलनों, जल–जंगल–ज़मीन के संघर्षों और भ्रष्टाचार विरोधी अभियानों में भी गांधीवादी प्रविधियों की पुनरावृत्ति देखी गई है (Nanda, 2002: 144)।

गांधी की विचारधारा का एक और समकालीन पक्ष उनका उपभोक्तावाद–विरोध है। जब वैश्वीकरण के दौर में जीवन का अर्थ उपभोग की अधिकता बन गया है, गांधी की 'जरूरत बनाम लालच' की चेतावनी पुनः मूल्यांकन की माँग करती है। उनका प्रसिद्ध वाक्य, "पृथ्वी सबकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है, लेकिन किसी एक की लालच की नहीं", आज पर्यावरणीय संकट के बीच गूंजता है।

गांधी की नैतिक राजनीति आज केवल ऐतिहासिक स्मृति नहीं, बल्कि भविष्य के नैतिक पुनर्निर्माण की एक आधारशिला है। यह हमें यह स्मरण कराती है कि सच्चा नेतृत्व आत्मसंयम, करुणा और जन–संवाद से उत्पन्न होता हैकृन कि प्रचार, वर्चस्व और ध्रुवीकरण से।

निष्कर्ष

महात्मा गांधी की नैतिक राजनीति को यदि केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध प्रतिरोध की रणनीति तक सीमित

कर दिया जाए, तो यह उनके चिंतन की व्यापकता और गहराई को गंभीर रूप से कम करके आँकने जैसा होगा। गांधी का राजनीतिक चिंतन एक समग्र जीवनदर्शन पर आधारित था, जो केवल राजनीतिक स्वाधीनता नहीं, बल्कि व्यक्ति और समाज के नैतिक उत्थान की आकांक्षा को केन्द्र में रखता है। उनके लिए 'राजनीति' केवल सत्ता के हस्तांतरण या प्रशासनिक संरचना का पुनर्गठन नहीं थी, बल्कि यह मनुष्य की आत्मा के शुद्धिकरण और समाज के नैतिक पुनर्निर्माण का साधन थी।

गांधी के लिए अहिंसा और सत्याग्रह केवल राजनीतिक रणनीतियाँ नहीं थीं, बल्कि वे जीवन की नैतिक साधनाएँ थीं, जिनका उद्देश्य अंततः सत्य की स्थापना और अहंकार के विनाश द्वारा एक आत्मनिष्ठ समाज की रचना था। इन मूल्यों के ज़रिए वे एक ऐसी राजनीति का निर्माण करना चाहते थे जो नैतिकता, आत्म–संयम, सेवा और सह–अस्तित्व के आधार पर खड़ी हो।

गांधी की ग्राम स्वराज की संकल्पना, जो आत्मनिर्भर गाँवों के माध्यम से लोकतंत्र का एक विकेन्द्रित, जन–संपृक्त और नैतिक रूप प्रस्तुत करती है, आज भी विकास और सशक्तिकरण के वैकल्पिक मॉडल के रूप में प्रासंगिक है। उनके द्वारा खादी, स्वदेशी, श्रम और उपभोग की सीमाओं को लेकर जो चिंतन प्रस्तुत किया गया, वह उपभोक्तावादी संस्कृति और वैश्विक पूंजीवाद की आज की चुनौतियों के विरुद्ध एक वैकल्पिक आधुनिकता का प्रस्ताव करता है।

आज के समय में जब लोकतंत्र के मूल्य बाज़ारवादी दबावों, तकनीकी वर्चस्व और पहचान की संकीर्ण राजनीति से लगातार क्षरित हो रहे हैं, गांधी की नैतिक राजनीति पुनः एक नैतिक और वैचारिक पुनर्विचार की आवश्यकता को सामने लाती है। उनकी राजनीति व्यक्ति के भीतर के नैतिक उत्तरदायित्व को सक्रिय करती हैकृएक ऐसी चेतना जो केवल अधिकारों की बात नहीं करती, बल्कि कर्तव्यों और आत्मसंयम को भी प्राथमिकता देती है। इस शोध का निष्कर्ष यह है कि महात्मा गांधी का नैतिक और राजनीतिक दर्शन महज़ अतीत की कोई स्मृति या आदर्शात्मक कल्पना नहीं है, बल्कि यह वर्तमान की नैतिक संकटग्रस्त राजनीति के लिए एक संभावित मार्गदर्शन और भविष्य के लिए एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। गांधी का चिंतन आज भी हमें यह सिखाता है कि कोई भी सामाजिक या राजनीतिक क्रांति तब तक अधूरी है जब तक वह व्यक्ति के भीतर नैतिक परिवर्तन को उत्प्रेरित न करे। इस दृष्टि से, गांधी का दर्शन केवल ऐतिहासिक नहीं, बल्कि एक जीवंत नैतिक विकल्प है—वर्तमान के लिए और भविष्य की संभावनाओं के लिए।

संदर्भ सूची

1. Brown, Judith M. Gandhi Prisoner of Hope. Yale University Press, 1991.
2. Chatterjee, Partha. Nationalist Thought and the Colonial World. A Derivative Discourse Oxford University Press, 1986.
3. Gandhi MK. An Autobiography. The Story of My Experiments with Truth. Navajivan Publishing House, 1927.
4. Nanda BR. Mahatma Gandhi. A Biography. Oxford University Press, 2002.
5. Parekh Bhikhu. Gandhi. A Very Short Introduction. Oxford University Press, 1997.
6. Parel, Anthony J. Gandhi's Philosophy and the Quest for Harmony. Cambridge University Press, 2006.